मनीष मोहन शर्मा एवं कंपनी

बनाम

राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड एवं अन्य

21 मार्च, 2006,

[रूमा पाल और दलवीर भंडारी, न्यायमूर्तिगण]

कंपनी अधिनियम, 1956-धाराएँ 397, 398, 402 और 634क -कंपनी में शेयरधारिता रखने वाले पारिवारिक रिश्तेदारों के समूह- एक समूह ने कंपनी विधि समिति से धारा 397 और 398 के तहत अपने निष्कासन के बारे में शिकायत की प्रबंधन-पक्षों के बीच मुद्दों का समाधान पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन (एमओएफ़ए) और हस्तांतरण दस्तावेज़ के निष्पादन द्वारा- इन दोनों दस्तावेज़ों को अभिन्न अंग मानते हुए, कंपनी विधि समिति धारा 402 के तहत आदेश पारित करता है और पक्षों को संबंधित संपत्तियों के हस्तांतरण के लिए हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने का निर्देश देता है, साथ ही आदेश के कार्यान्वयन में कठिनाई होने पर पक्षों को इसके लिए संपर्क करने की स्वतंत्रता भी देता है-इसके बाद, उपदान के मुद्दे पर पक्षों के बीच उत्पन्न विवाद पर, जब उन्होंने कंपनी विधि समिति से संपर्क किया, तो उसने पाया कि यह मुद्दा दोनों दस्तावेज़ों को निष्पादित करते समय विचाराधीन नहीं था, और चूँकि उन दस्तावेज़ों में व्याख्या खंड के संबंध में पक्षों के बीच विवाद था, इसलिए वह धारा 634 क के तहत कोई आदेश पारित नहीं कर सका- उच्च न्यायालय ने कंपनी विधि समिति के आदेश को संधारित रखा - अपील पर, यह माना गया: 402 के तहत कंपनी विधि समिति का आदेश एक अंतरिम आदेश नहीं था; यह धारा 634 क के तहत लागू करने योग्य एक प्रारंभिक आदेश था- कंपनी विधि समिति बाध्य था इसे निष्पादित करने के लिए, यदि आवश्यक हो, तो इसकी शर्तों की व्याख्या करने के लिए, और पक्ष उस व्याख्या से बाध्य थे- यह विशेष रूप से इसलिए था क्योंकि यह एक सहमति आदेश था, और उससे भी अधिक एक पारिवारिक समझौते से संबंधित था जिसे लागू किया

जाना था, भले ही पक्षकारों के वास्तविक अधिकारों के संबंध में त्रुटि, भूल या तथ्य की अज्ञानता के आधार पर सहमति हो।

कंपनी अधिनियम, 1956- धारा 397, 398 और 402- धारा 402 के अंतर्गत कंपनी विधि समिति की शक्तियाँ- यह अभिनिर्धारित किया गया: ये अवशिष्ट हैं और धारा 397(2) और धारा 398(2) के अंतर्गत उसे उपलब्ध शक्तियों के अतिरिक्त हैं, और उसे धारा 397(1) के अंतर्गत शिकायत किए गए मामलों को समाप्त करने या धारा 398(1) के अंतर्गत शिकायत किए गए या आशंका वाले मामलों को रोकने के लिए ऐसा आदेश देने की अनुमति देते हैं जिसे वह उचित समझे।

कंपनी अधिनियम, 1956- धारा 397, 398 और 634 क- धारा 634 क के तहत कंपनी विधि समिति के आदेशों का प्रवर्तन- अभिनिर्धारित: धारा के आरंभ में 'कोई भी आदेश' शब्द यह दर्शाता है कि कंपनी विधि समिति द्वारा धारा 397 और 398 के तहत आवेदन पर दिए गए सभी आदेश, आदेश की प्रकृति पर किसी सीमा के बिना, डिक्री की तरह प्रवर्तनीय हैं।

अपीलकर्ता और उतरदाता, करीबी पारिवारिक रिश्तेदारों के दो समूह हैं जिनकी उत्तरदाता संख्या 1 कंपनी में समान हिस्सेदारी है। अपीलकर्ता ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 397 और 398 के तहत कंपनी विधि समिति (सी.एल.बी) के समक्ष एक कंपनी याचिका दायर की, जिसमें शिकायत की गई कि उन्हें कंपनी के प्रबंधन से हटा दिया गया है। कंपनी विधि समिति ने कंपनी के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक को हटा दिया। एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश को अध्यक्ष नियुक्त किया गया, जिन्होंने पक्षों के बीच मामलों को सुलझाने का प्रयास किया। पक्षों के बीच एक पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन (एमओएफए) और हस्तांतरण दस्तावेज निष्पादित किए गए। 19 अगस्त, 1999 को, कंपनी विधि समिति ने इन दोनों दस्तावेज़ों को अभिन्न अंग मानते हुए एक आदेश पारित किया और पक्षों को

संबंधित संपत्तियों के हस्तांतरण के लिए हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने का निर्देश दिया। यह आदेश धारा 402 के तहत पारित किया गया था। इसने पक्षों को आदेश के कार्यान्वयन में किसी कठिनाई की स्थिति में कंपनी विधि समिति से संपर्क करने की स्वतंत्रता भी दी। समाधान पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के अनुसार, उत्तरदाता ने कार्य पूरा होने की सूचना दी। अपीलकर्ता ने इस अधिसूचना पर आपत्ति जताई क्योंकि यह स्थानांतरण दस्तावेज़ के अनुरूप नहीं था। इसलिए उन्होंने धारा 634 क के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें अधिसूचना की वैधता पर सवाल उठाया गया और उत्तरदाता को और स्थानांतरण दस्तावेज़ के अनुसार आगे बढ़ने का निर्देश देने की प्रार्थना की गई। इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान, उत्तरदाता ने कंपनी विधि समिति के आदेश को वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया। कंपनी विधि समिति के समक्ष सुनवाई के दौरान, उपार्जित उपदान की देयता का मुद्दा उठाया गया और इस पर पक्षों के बीच विवाद हुआ। कंपनी विधि समिति ने माना कि जब पक्षों ने और हस्तांतरण दस्तावेज़ प्रस्तुत किए थे, तब उन्होंने उपदान की देयताओं पर विचार नहीं किया था, इस मुद्दे पर कोई सहमति नहीं थी और इन दोनों दस्तावेज़ों में व्याख्या खंड के संबंध में पक्षों के बीच एक वास्तविक विवाद था। तदनुसार, इसने माना कि वह धारा 634 क के तहत आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं कर सकता और इसे अस्वीकार कर दिया। इसने उत्तरदाताओं द्वारा दायर आवेदन को भी अस्वीकार कर दिया। अपीलकर्ता ने इस आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की। उच्च न्यायालय ने कंपनी विधि समिति के आदेश को संधारित रखा और अपील को खारिज कर दिया। अतः वर्तमान अपील दायर किया गया।

अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया कि कंपनी विधि समिति अपने आदेश को निष्पादित करने से इनकार नहीं कर सकता, विशेषकर जब यह पक्षकारों की सहमति से पारित किया गया था। उत्तरदाता ने तर्क दिया कि कंपनी विधि समिति का आदेश अंतिम आदेश नहीं था, और यह अपील भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के तहत खारिज कर दी जानी

चाहिए, यह ध्यान में रखते हुए कि सरकार द्वारा अपीलकर्ताओं द्वारा धारित संपत्तियों के कुप्रबंधन की जांच की जा रही है।

अपीलों को स्वीकार करते हुए और मामले को कंपनी विधि समिति को वापस भेजते हुए, न्यायालय ने

यह अभिनिर्धारित किया: 1. कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय दोनों ने कंपनी अधिनियम की धारा 634 क के तहत 19 अगस्त, 1999 के आदेश को निष्पादित करने से इनकार करके गलती की। इस प्रकार वे उस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहे हैं जो उन्हें प्रदान किया गया था। आदेश की प्रकृति को देखते हुए, जिसका निष्पादन करने के लिए वे बाध्य थे, यह विफलता और भी गंभीर हो जाती है। उन्होंने गलती से केवल अनुबंधों पर लागू सिद्धांतों पर ही काम किया है और इस तथ्य की अनदेखी की है कि पक्षों के बीच समझौता कंपनी विधि समिति के सहमति आदेश में परिणत हुआ था। [113-सी-डी]

2.1. कंपनी विधि समिति ने 19 अगस्त, 1999 के अपने आदेश में स्वयं दर्ज किया था कि यदि आदेश के कार्यान्वयन में कोई कठिनाई हो तो 'पक्षकार इस आदेश के कार्यान्वयन के लिए हमसे आवेदन करने के लिए स्वतंत्र होंगे'। फिर भी, जब इस तरह के कार्यान्वयन के लिए आवेदन किया गया, तो कंपनी विधि समिति ने अपने ही निर्देशों का पालन नहीं किया। (110-जी-एच; 111-ए]

2.2. यह किसी का वाद नहीं है कि 19 अगस्त 1999 का आदेश अमान्य था। उत्तरदाताओं ने इसे वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया था। कंपनी विधि समिति ने उस आवेदन को खारिज कर दिया। पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील दायर की गई है जो लंबित बताई जा रही है। हालांकि, यह नहीं दिखाया गया है कि वापस लेने का आवेदन इस तर्क पर आधारित था कि 19 अगस्त 1999 का आदेश अमान्य था। ऐसा कोई मुद्दा उठाए जाने और उस पर निर्णय लिए जाने के अभाव में, कंपनी विधि समिति आदेश

को निष्पादित करने के लिए बाध्य था। यदि समिति ने पाया कि डिक्री या उसकी किसी भी शर्त की व्याख्या की आवश्यकता है, तो उस विशेष शर्त की व्याख्या करना और ऐसी व्याख्या के आधार पर डिक्री को निष्पादित करना समिति के अधिकार क्षेत्र में था। (111-एफ-एच; 112-ए)

तोपनमल छोटामल बनाम मेसर्स कुंदोमल गंगाराम एवं अन्य, एआईआर (1960) एससी 388 और *सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम राजगोपालन,* एआईआर (1964) एससी 743, अवलंबित।

2.3. एक बार समझौते की उन विशेष शर्तों पर सहमत हो जाने के बाद, जिन्हें डिक्री में शामिल किया गया था, संबंधित पक्ष निष्पादन न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई शर्तों का पालन करने के लिए बाध्य हैं। एक बार व्याख्या हो जाने के बाद, डिक्री को व्याख्या के अनुसार निष्पादित किया जाना चाहिए। [112-सी-डी]

3.1. 19 अगस्त, 1999 का आदेश अंतरिम आदेश नहीं था। (109-बी-ई)

3.2. निस्संदेह कंपनी विधि समिति 'याचिका और विभिन्न अंतरिम आवेदनों के अंतिम निष्पादन' की बात करता है। ऐसा इसलिए था क्योंकि आदेश के अनुसार (जिसमें और हस्तांतरण दस्तावेज़ शामिल थे), एमएमएस समूह और उत्तरदाताओं के बीच संबंध विच्छेद को पूरा करने के लिए कई कदम उठाए जाने थे। इससे और हस्तांतरण दस्तावेज़ की पुष्टि और अंतरिम व्यवस्था नहीं हुई। आदेश के प्रभावी भाग में निर्देश दिया गया था कि पक्षकारों द्वारा और हस्तांतरण दस्तावेज़ की अनुसूचियों को पूरा करने के बाद उसका निष्पादन किया जाए। पूरा आदेश सहमति से पारित किया गया था। पक्षकार इससे पीछे नहीं हट सकते। इसलिए, इस आदेश को इस अर्थ में अंतरिम आदेश नहीं कहा जा सकता कि इसके द्वारा तय किए गए मुद्दों को फिर से खोला जा सकता है।(109-जी-एच; 110-ए-बी)

4.1. 19 अगस्त, 1999 का आदेश कंपनी अधिनियम की धारा 402 के अंतर्गत स्पष्ट रूप से पारित किया गया था। (109-बी)

4.2. धारा 402 के अंतर्गत शक्तियां अवशिष्ट प्रकृति की हैं और धारा 397(2) और धारा 398(2) के अंतर्गत कंपनी विधि समिति को उपलब्ध शक्तियों के अतिरिक्त, जो कंपनी विधि समिति को धारा 397(1) के अंतर्गत शिकायत किए गए मामलों को समाप्त करने और धारा 398(1) के अंतर्गत शिकायत किए गए या आशंका वाले मामलों को समाप्त करने या रोकने के उद्देश्य से ऐसा आदेश पारित करने की अनुमति देती हैं जो वह उचित समझे। (109·एफ-जी)

5.1. 19 अगस्त, 1999 का आदेश वास्तव में एक प्रारंभिक डिक्री थी। मामले का अंतिम निष्पादन या अंतिम डिक्री, और हस्तांतरण दस्तावेज़ की शर्तों के पूर्ण कार्यान्वयन के बाद होगी। इसलिए, संयुक्त प्रबंधन से संबंधित पारित अंतरिम आदेशों को उस समय तक जारी रखने का निर्देश दिया गया था। (110-एफ-जी)

5.2. सभी डिक्री, चाहे प्रारंभिक हों या अंतिम, निष्पादन के लिए अतिसंवेदनशील हैं। [110-एफ]

5.3. धारा 634 क कंपनी विधि समिति के आदेशों के प्रवर्तन का प्रावधान करती है। धारा के आरंभ में प्रयुक्त शब्द 'कोई भी आदेश' यह दर्शाता है कि कंपनी विधि समिति द्वारा धारा 397 और 398 के अंतर्गत किसी आवेदन पर दिए गए सभी आदेश, डिक्री की तरह प्रवर्तनीय हैं कंपनी विधि समिति द्वारा पारित आदेश की प्रकृति पर कोई सीमा नहीं है। (110-8-सी)

लायलपुर बैंक लिमिटेड बनाम रामजी दास (मृतक) अपने पुत्रों एवं एक अन्य के माध्यम से, एआईआर (1945) पी सी 60, अवलंबित।

5.4. चूँकि कंपनी विधि समिति धारा 634 क के तहत किसी आवेदन पर विचार करते समय एक निष्पादन न्यायालय के रूप में कार्य करता है, इसलिए वह उन सभी सीमाओं के अधीन होता है जो किसी डिक्री को निष्पादित करने वाले न्यायालय पर लागू होती हैं। यह सर्वविदित है कि निष्पादन न्यायालय डिक्री के विरुद्ध तब तक कोई कदम नहीं उठा सकता जब तक कि निष्पादित की जाने वाली डिक्री अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र के अभाव में अमान्य न हो। [111-ए-बी]

सुंदर दास बनाम राम प्रकाश, **[1977] 2 एससीसी 662,** *सेठ हिरालाल पाटनी बनाम श्री कालीनाथ,* **[1962] 2 एससीआर 747,** *वासुदेव धनजीभाई मोदी बनाम राजाभाई अब्दुल रहमान एवं अन्य,* **[1970] 1 एससीसी 670 एवं** विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से *रफीक बीबी (मृत) बनाम विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से सैयद वालिउद्दीन (मृत) एवं अन्य,* **[2004] 1 एससीसी 287, अवलंबित।**

6. 19 अगस्त, 1999 का आदेश एक सहमति आदेश था। इसके नियम एवं शर्तें एवं स्थानांतरण दस्तावेज़ में निहित थीं जो स्पष्ट रूप से आदेश का एक अभिन्न अंग थे। सहमति डिक्री को न्यायालय की अनुमति के साथ एक अनुबंध माना गया है। यह एक मात्र अनुबंध से कहीं अधिक है एवं इसमें आदेश एवं अनुबंध दोनों के तत्व शामिल हैं।[111-डी-ई]

सी.एफ.अंगदी बनाम वाई.एस. हिरणय्या, **[1972] 1 एससीसी 191, अवलंबित।**

वेंटवर्थ बनाम बुलेन, **141 ईएलआर 769 एवं** *चार्ल्स ह्यूबर किंच बनाम एडवर्ड कीथ वालकॉट एवं अन्य,* **एआईआर (1929) पीसी 289, संदर्भित।**

7.1. निष्पादन न्यायालय का प्रयास यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि पक्षकारों को डिक्री का फल मिले। यह आदेश तब और प्रबल होता है जब यह एक सहमति डिक्री हो एवं दोगुना प्रबल होता है जब सहमति डिक्री एक पारिवारिक समझौता हो। पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के उपखंड 3.1 एवं 3.6 यह स्पष्ट करते हैं कि पक्षकारों के बीच ये समझौते

परिवार के सदस्यों के बीच संयुक्त रूप से स्वामित्व वाली संपत्तियों से संबंधित लंबे समय से लंबित विवादों को अंततः हल करने के लिए किए गए थे। [111-डी-ई]

7.2. पारिवारिक समझौते एक विशेष साम्य सिद्धांत द्वारा शासित होते हैं एवं यदि ईमानदारी से किए गए हों तो उन्हें लागू किया जाना चाहिए। ऐसा तब भी होगा जब 'शर्तों पर सहमति पक्षकारों की किसी त्रुटि के आधार पर हुई हो या वे किसी भूल या तथ्य की अज्ञानता के कारण उत्पन्न हुई हों कि पक्षकारों के अधिकार वास्तव में क्या हैं, या वे बिंदु जिन पर उनके अधिकार वास्तव में निर्भर करते हैं।' ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी समझौते का उद्देश्य परिवार को लंबी मुकदमेबाजी से बचाना एवं परिवार में सौहार्द एवं सद्भावना लाना होता है।

8. उत्तरदाताओं का यह तर्क है कि इस न्यायालय को अनुच्छेद 136 के तहत मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए अपीलकर्ताओं द्वारा 5 चाय बागानों के प्रबंधन में किसी कथित कदाचार के कारण अस्वीकार्य है। अपीलकर्ताओं द्वारा 5 चाय बागानों के संचालन में कथित रूप से दक्षता की कमी यह तय करने के लिए कोई महत्वपूर्ण विचार नहीं है कि 19 अगस्त, 1999 के आदेश को लागू किया जाना चाहिए या नहीं। [113-डी-ई]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2003 का दीवानी अपील संख्या 9446,

पटना उच्च न्यायालय के 2001 के कंपनी अपील संख्या 1, में दिनांक 14.2.2003 के निर्णय एवं अंतिम आदेश से।

के साथ

वर्ष 2003 का दीवानी अपील संख्या 9445

अपीलकर्ताओं के लिए- सी.ए. सुंदरम, सुश्री रोहिणी मूसा, सुश्री शिव संतानम शिवनाथन, श्रीमती जयश्री, आशीष वाड, नीरज कुमार, अरविंद गुप्ता एवं सुश्री सुमंती चक्रवर्ती (मेसर्स जे.एस. वाड एंड कंपनी के लिए)।

उत्तरदाताओं की ओर से - ए.एन. हक्सर एवं अशोक कुमार।

न्यायालय का निर्णय

रूमा पाल, न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया। राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड, उत्तरदाता संख्या 1 की स्थापना चतुर भुज शर्मा एवं मदन मोहन शर्मा ने की थी। वे चचेरे भाई-बहन थे, उनके पिता भाई थे। उत्तरदाता संख्या 1 में दोनों चचेरे भाइयों की शेयरधारिता बराबर थी। 1992 से, दोनों समूहों के बीच विवाद उत्पन्न हुए, जिन्हें क्रमशः सीबीएस समूह एवं एमएमएस समूह कहा जाता है। एमएमएस समूह हमारे समक्ष अपील में है एवं सीबीएस समूह का प्रतिनिधित्व उत्तरदाता संख्या 2 से 4 द्वारा किया जाता है। विवाद मुख्य रूप से परिवार के स्वामित्व वाली विभिन्न कंपनियों के प्रबंधन से संबंधित थे, जिनमें विशेष रूप से उत्तरदाता संख्या 1 शामिल है।

1996 में, एमएमएस समूह ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 397 एवं 398 के प्रावधानों के तहत कंपनी विधि समिति, नई दिल्ली के समक्ष एक कंपनी याचिका (1996 की संख्या 56) दायर की, जिसमें कंपनियों के प्रबंधन से बेदखल किए जाने की शिकायत की गई एवं ऐसे प्रबंधन में भूमिका की मांग की गई। विभिन्न अंतरिम आदेश पारित किए गए। 9 जनवरी, 1997 को, कंपनी विधि समिति ने उत्तरदाता संख्या 2 को कंपनी के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक पद से हटा दिया एवं सेवानिवृत्त न्यायाधीश, न्यायमूर्ति ए.एन. वर्मा को कंपनी का अध्यक्ष नियुक्त किया। 1998 में, कंपनी विधि समिति द्वारा पारित एक अन्य अंतरिम आदेश के अनुसार, एमएमएस समूह को कंपनी के संयुक्त प्रबंधन में रखा गया।

कंपनी के बैंकरों सहित कंपनियों के लेनदारों, अर्थात सिंडिकेट बैंक ने, बकाया राशि की वसूली के लिए, कंपनी के खिलाफ कार्यवाही शुरू की। कंपनी विधि समिति के अनुनय-विनय एवं न्यायमूर्ति ए.एन. वर्मा के सराहनीय प्रयासों से अंततः दोनों पक्षों के बीच मामला सुलझ गया। पारिवारिक समझौते की शर्तें पारिवारिक व्यवस्था एवं हस्तांतरण ज्ञापन दस्तावेज़ में निर्धारित की गईं।

19 अगस्त, 1999 के एक आदेश द्वारा, कंपनी विधि समिति ने पक्षों के बीच विवादों का इतिहास एवं एक-दूसरे के विरुद्ध की गई कार्यवाही एवं अंततः पक्षों के मतभेदों के समाधान को दर्ज किया। कंपनी विधि समिति ने दर्ज किया कि समिति ने सुनवाई के दौरान पक्षों के बीच घनिष्ठ संबंधों को ध्यान में रखते हुए मामलों को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझाने के लिए विभिन्न समझौते की शर्तें सुझाई थीं। इसने अपनी राय व्यक्त की थी कि एक निष्पक्ष एवं न्यायसंगत समझौते के लिए, उत्तरदाता संख्या 1 के स्वामित्व वाले नौ चाय बागानों में से, पाँच चाय बागानों को कुछ अन्य परिसंपत्तियों के साथ एमएमएस समूह में निहित किया जाना चाहिए। इस सुझाव को पक्षकारों ने उनके बीच हुए समझौते में स्वीकार कर लिया। उन्होंने एमएमएस समूह को दी जाने वाली चाय बागानों एवं अन्य संपत्तियों की पहचान की एवं उत्तरदाता संख्या 1 के दायित्व के हिस्से की भी मात्रा निर्धारित की, जिसका भुगतान एमएमएस समूह को करना था, जो 7,24,67,708.90 रुपये (सात करोड़ चौबीस लाख सड़सठ हजार सात सौ आठ रुपये एवं नब्बे पैसे मात्र) था। आदेश में दर्ज है कि पक्षों के बीच निष्पादित पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन एवं हस्तांतरण दस्तावेज़ आदेश का एक अभिन्न अंग होगा। जहाँ तक 7,24,67,708.90 रुपये की राशि का संबंध है, कंपनी विधि समिति ने कहा कि यह हस्तांतरण दस्तावेज़ में निर्धारित सभी कटौतियों एवं समायोजनों के अधीन होगा। श्री एम.सी.जोसेफ, चार्टर्ड अकाउंटेंट को हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 4.1.1.12 के प्रयोजन के लिए एक स्वतंत्र लेखा परीक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था, जो इसमें दिए गए आंकड़ों का सत्यापन एवं प्रमाणन करेंगे। यह भी दर्ज किया गया कि समझौते के पूरा होने पर, पाँचों सम्पदाएँ एवं कुछ अन्य संपत्तियाँ एमएमएस समूह में निहित हो जाएँगी। इन पर अपना स्वामित्व पूर्ण करने के लिए, कंपनी विधि समिति ने पक्षों को संबंधित संपत्तियों के हस्तांतरण को प्रभावित करने के लिए हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने का निर्देश दिया। तदनुसार, समिति ने कंपनी अधिनियम 1956 की धारा 402 के तहत प्रदत्त शक्तियों के अनुसरण में निर्देश दिया कि:-

(क) दोनों पक्ष राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड की परिसंपत्तियों से संबंधित हस्तांतरण दस्तावेज़ में अनुसूची 1, 4, 7, 8, 11 एवं 12 को भरकर पूरा करेंगे (जो वर्तमान में रिक्त/अधूरे हैं), आपसी समझौता एवं उक्त अनुसूचियों के पूरा होने के बाद, पक्षकार तुरंत राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड की परिसंपत्तियों से संबंधित हस्तांतरण दस्तावेज़ निष्पादित करेंगे;

(ख) दोनों पक्ष आपसी सहमति से पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन (जो वर्तमान में रिक्त/अधूरे हैं) में अनुसूची 14 (भाग बी), 5, 6, 7, 8 एवं 9 को भरकर पूरा करेंगे एवं उक्त अनुसूचियों के पूरा होने के बाद, पक्ष तुरंत पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन पर अमल करेंगे। एवं दोनों पक्ष उक्त दस्तावेजों के तहत प्रस्तावित समझौते को लागू करने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएंगे, जिन्हें 30 सितंबर, 1999 तक पूरा किया जाना चाहिए। पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन एवं राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड की संपत्तियों से संबंधित हस्तांतरण दस्तावेज़, दोनों पक्षों के बीच संपूर्ण समझौते को दर्शाते हैं एवं इन दस्तावेजों में स्पष्ट रूप से बताए गए समझौते के अलावा कोई समझौता एवं/या व्यवस्था नहीं है।

आदेश का कंडिका 8 भी कुछ महत्वपूर्ण है एवं इसे शब्दशः उद्धृत किया गया है:-

"समझौते को प्रभावित करने में समय का बहुत महत्व होगा। यदि कोई भी पक्ष पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन या राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड की परिसंपत्तियों से संबंधित हस्तांतरण दस्तावेज़ के अनुसार अपने दायित्वों को उसमें निर्दिष्ट समय के भीतर पूरा करने में विफल रहता है, तो पीड़ित पक्ष को उचित आदेश/निर्देश प्राप्त करने एवं याचिका एवं विभिन्न अंतरिम आवेदनों के अंतिम निष्पादन में तेजी लाने के लिए हमसे संपर्क करने की स्वतंत्रता होगी। सभी लेन-देन पूरा होने के बाद, दोनों पक्ष याचिका एवं विभिन्न अंतरिम आवेदनों के अंतिम निष्पादन के लिए हमारे समक्ष

उपस्थित होंगे। इस आदेश के कार्यान्वयन में किसी भी अन्य कठिनाई की स्थिति में, पक्ष इस आदेश के कार्यान्वयन के लिए हमसे आवेदन करने के लिए स्वतंत्र होंगे।"

आदेश के कंडिका 12 में कंपनी विधि समिति ने दर्ज किया कि आदेश पक्षों को पढ़कर सुनाया गया था एवं पक्षों ने आदेश की शर्तों पर अपनी सहमति की पुष्टि की थी।

पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन (जिसे आगे 'एमओएफए' कहा जाएगा) के अनुसार, सीबीएस समूह को एमएमएस समूह को एक पूर्णता अधिसूचना देना आवश्यक था, जिसमें यह दर्शाया गया हो कि पाँचों सम्पदाएँ सभी भारों से मुक्त हैं एवं उत्तरदाता संख्या 1 द्वारा एमएमएस समूह को हस्तांतरित किए जाने के लिए तैयार हैं। सीबीएस समूह के अनुसार, यह अधिसूचना 17 जनवरी, 2000 को दिया गया था। एमएमएस समूह ने 18 जनवरी, 2000 एवं 20 जनवरी, 2000 के पत्रों द्वारा इस अधिसूचना पर इस आधार पर आपत्ति जताई कि यह हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 7.2 एवं 7.3 के अनुरूप नहीं था।

7 फ़रवरी, 2000 को एमएमएस समूह ने कंपनी अधिनियम 1956 की धारा 634 क के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें इस बात पर निर्णय लेने का अनुरोध किया गया कि क्या 17 जनवरी, 2000 का अधिसूचना वैध था एवं यदि हाँ, तो सीबीएस समूह को हस्तांतरण दस्तावेज़ एवं वित्त मंत्रालय के अनुसार कार्य पूरा करने का निर्देश दिया जाए। वैकल्पिक रूप से, यह अनुरोध किया गया कि यदि अधिसूचना को अमान्य पाया जाता है, तो सीबीएस समूह को उत्तरदाता संख्या 1 का संपूर्ण प्रबंधन एमएमएस समूह को सौंपने का निर्देश दिया जाए एवं एमएमएस समूह को समझौता पूरा करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, यह अनुरोध किया गया कि कंपनी के प्रबंधन में सीबीएस समूह की ज़िम्मेदारियों को संभालने के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की जाए एवं उसे पक्षों के बीच समझौते को पूरा करने का निर्देश दिया जाए।

इस आवेदन पर सुनवाई के दौरान, सीबीएस समूह ने 5 जुलाई, 2000 को एक आवेदन दायर किया, जिसमें कंपनी विधि समिति के 19 अगस्त, 1999 के आदेश सहित सभी आदेशों को वापस लेने एवं मामले को अंतिम सुनवाई के लिए उठाने एवं उत्तरदाता संख्या 1 को सिंडिकेट बैंक के बकाया का भुगतान करने के लिए अपनी एक या अधिक संपत्तियां बेचने की अनुमति देने या वैकल्पिक रूप से सिंडिकेट बैंक एवं अन्य वैधानिक बकाया का भुगतान करने हेतू उत्तरदाता संख्या 1 की परिसंपत्तियों एवं संपत्तियां बेचने के लिए एक प्रशासक नियुक्त करने की मांग की गई।

एमएमएस समूह द्वारा उठाए गए अन्य तर्कों के अलावा, कंपनी विधि समिति के समक्ष उनकी ओर से यह तर्क दिया गया कि वे 8.5 करोड़ रुपये की उपार्जित उपदान देयता या एमएमएस समूह को बेचे जाने के लिए सहमत 5 सम्पदाओं से संबंधित 4.74 करोड़ रुपये के हिस्से का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। यह कहा गया कि उन्होंने उत्तरदाता संख्या 1 को पहले ही कई राशियाँ चुका दी हैं एवं समझौते के अनुसार कटौती के हकदार हैं। उन्होंने कंपनी विधि समिति के 9 अगस्त, 1999 के आदेश को एक डिक्री के रूप में लागू करने की मांग की।

सीबीएस समूह ने कंपनी विधि समिति के समक्ष प्रस्तुतियों का विरोध किया एवं कहा कि वे अभी भी समझौता करने में रुचि रखते हैं बशर्ते एमएमएस समूह समझौते की शर्तों का पालन करे। सीबीएस समूह के अनुसार, यदि एमएमएस समूह ने सिंडिकेट बैंक को सीधे 3.6 करोड़ रुपये की अपनी बकाया देनदारी का भुगतान कर दिया होता, तो सीबीएस समूह बैंक द्वारा मांगी गई शेष 4 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान कर सकता था एवं 5 बिक्री सम्पदाएँ बिना किसी शुल्क के हस्तांतरित की जा सकती थीं एवं एमएमएस समूह इन सम्पदाओं का पूर्ण स्वामी बन जाता। यह भी कहा गया कि एमएमएस समूह द्वारा अपना बकाया चुकाने में विफलता के कारण, बैंक को ऋण वसूली न्यायाधिकरण से एक आदेश प्राप्त हुआ था एवं कंपनी की संपत्तियाँ संलग्न कर ली गई थीं।

कंपनी विधि समिति ने 18 अगस्त, 2000 के अपने आदेश में उल्लेख किया कि एमएमएस समूह ने तर्क दिया था कि वे बकाया बैंक बकाया राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं हैं, एवं एमएमएस समूह के अनुसार, सभी प्रावधानों को लागू करने के बाद समझौते के अनुसार, एमएमएस समूह द्वारा सीबीएस समूह को कुछ भी देय नहीं होगा। वास्तव में, एमएमएस समूह के अनुसार, खाते के समायोजन के बाद सीबीएस समूह को एमएमएस समूह को एक राशि का भुगतान करना था। समिति ने नोट किया कि एकमात्र प्रश्न यह था कि क्या 5 सम्पदाओं के कर्मचारियों के संबंध में उपार्जित उपदान देनदारियों को पक्षों द्वारा समझौते करते समय ध्यान में रखा गया था एवं पक्षों ने पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन में खंड 4.1.1.1 को शामिल करने का क्या इरादा किया था। समिति ने पाया कि सीबीएस समूह के इस तर्क में योग्यता थी कि उपदान के कारण देनदारियों पर पक्षों द्वारा कभी विचार नहीं किया गया था जब उन्होंने एमएमएस समूह की देनदारियों का हिस्सा तय करने के लिए समझौता किया था। इस प्रकार, यद्यपि उन्होंने पाया कि एमएमएस समूह "राशि का दावा करने में कानूनी रूप से सही था", सीबीएस समूह का यह तर्क उचित था कि यह पक्षकारों के विचार में नहीं था। इसलिए, यह पाया गया कि दोनों पक्षों के बीच विचारों का मेल नहीं था एवं उपार्जित उपदान देयता से संबंधित खंड की व्याख्या के संबंध में वास्तविक विवाद था। इन परिस्थितियों में, समिति ने पाया कि वह एमएमएस समूह द्वारा दायर धारा 634 क के तहत आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं कर सकता। जहाँ तक सीबीएस समूह के आवेदन का संबंध है, समिति द्वारा पारित आदेशों को वापस लेने की उनकी प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया। दोनों आवेदनों को तदनुसार खारिज कर दिया गया, लेकिन यह देखा गया कि:-

> "यदि पक्षकार अभी भी विवादों का सौहार्दपूर्ण ढंग से निपटारा चाहते हैं, तो वे ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं, अन्यथा याचिका पर सुनवाई होगी एवं उस समय तक कंपनी

के मामलों के प्रबंधन के संबंध में वर्तमान व्यवस्था सहित सभी अंतरिम आदेश जारी रहेंगे।"

एमएमएस समूह ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 1 के तहत अपील के माध्यम से पटना उच्च न्यायालय में मामला दायर किया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि उपदान से संबंधित खंड, अर्थात खंड 4.1.1.11, स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि उपदान का भुगतान करने का दायित्व एमएमएस समूह का है। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने यह भी पाया कि कंपनी विधि समिति का यह कहना सही था कि यह पक्षकारों के विचार में नहीं था एवं तदनुसार अपील को खारिज कर दिया।

अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि न्यायालय 19 अगस्त, 1999 के सहमति आदेश को लागू करने से इनकार नहीं कर सकता। यह कहा गया कि कंपनी विधि समिति धारा 634 क के तहत किसी आवेदन पर विचार करते समय एक निष्पादन न्यायालय के रूप में कार्य करता है एवं ऐसी स्थिति में उसकी शक्तियाँ इस सीमा तक सीमित हो जाती हैं कि वह निर्णय को यथास्थिति में ही स्वीकार करने के लिए बाध्य है। निष्पादन न्यायालय डिक्री की व्याख्या कर सकता है एवं व्याख्या के अनुसार उसका निष्पादन कर सकता है, लेकिन उसे निष्पादित करने से इनकार नहीं कर सकता। यह तर्क दिया गया कि सहमति आदेश का कानूनी प्रभाव यह है कि यह पक्षों पर बाध्यकारी है एवं इसे बहुत सीमित आधारों को छोड़कर अपास्त नहीं किया जा सकता, जिनमें से कोई भी मौजूद नहीं था। यह प्रस्तुत किया गया कि भले ही सहमति आदेश में कोई अस्पष्टता थी जिसकी व्याख्या की जा सकती थी। वास्तव में, समझौते या सहमति आदेश के संबंध में कोई तथ्यात्मक त्रुटि नहीं हुई थी। जहाँ तक हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 4.1.1.11 के तहत एमएमएस समूह की उस उपदान का भुगतान करने की ज़िम्मेदारी का सवाल है जो एमएमएस समूह को हस्तांतरित संपत्ति के कर्मचारियों को उपार्जित हुई थी, यह प्रस्तुत किया गया कि एमएमएस समूह ने अपने अधिकारों एवं विवादों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना

कंपनी विधि समिति के समक्ष सहमति व्यक्त की थी एवं वह अभी भी उस दायित्व को लेने के लिए तैयार है। किसी भी स्थिति में, यह प्रस्तुत किया गया कि विवादित खंड को अलग किया जा सकता है एवं समझौते के शेष खंडों को लागू किया जा सकता है।

सीबीएस समूह की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन एवं हस्तांतरण दस्तावेज़ दर्ज करने वाला कंपनी विधि समिति का आदेश अंतिम आदेश नहीं था। तर्क दिया गया है कि पक्षकारों ने कभी नहीं समझा कि समिति के 9 अगस्त, 1999 के आदेश ने विवादों का अंतिम रूप से निपटारा कर दिया है। दरअसल, उच्च न्यायालय के आदेश के बाद, अपीलकर्ता खुद कंपनी विधि समिति के पास वापस गए एवं एक आवेदन दायर किया जिसमें खंड 4.1.1.11 को अलग करने के बाद समझौते को लागू करने की प्रार्थना की गई। वह आवेदन लंबित था। दूसरा, यह प्रस्तुत किया गया कि समझौते के अनुसार, एमएमएस समूह द्वारा सीबीएस समूह को राशि का भुगतान कार्य पूरा होने के साथ-साथ किया जाना था। एमएमएस समूह ने अपने दायित्व को पूरा करने में चूक की और वास्तव में, पक्षों को पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के अनुसार समझौते को निरस्त करने का अधिकार था। जहाँ तक हस्तांतरण दस्तावेज़ का संबंध है, यह कहा गया था कि सीबीएस समूह ने उसके अनुसार सख्ती से कार्य किया था। यह कहा गया था कि यदि एमएमएस समूह ने समझौते के तहत अपने दायित्वों को पूरा किया होता, तो बैंक का बकाया चुका दिया जाता। वर्तमान स्थिति के अनुसार, बैंक बकाया राशि लगभग 8 करोड़ रुपये से बढ़कर लगभग 18 करोड़ रुपये हो गई थी। यह कहा गया कि इक्विटी के समायोजन में, एमएमएस समूह को वर्तमान में प्राप्त बैंक बकाया राशि में से अपना हिस्सा वहन करना होगा। अंततः यह प्रस्तुत किया गया कि एमएमएस समूह की अपील पर उनके आचरण को ध्यान में रखते हुए अनुच्छेद 136 के तहत विचार नहीं किया जाना चाहिए। हमारा ध्यान एमएमएस समूह के प्रबंधन के अंतर्गत आने वाले 5 चाय बागानों के खिलाफ सरकार द्वारा शुरू की गई एक अन्वेषण की ओर आकर्षित किया गया।

मोटे तौर पर, पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन का ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ उत्तरदाता संख्या 1 द्वारा एमएमएस समूह को 5 चाय बागानों के हस्तांतरण का प्रावधान करते हैं, बशर्ते एमएमएस समूह उत्तरदाता संख्या 1 की देनदारियों में अपने हिस्से के लिए एक निश्चित राशि का भुगतान करे। सीबीएस समूह को उत्तरदाता संख्या । और उसकी सभी अन्य चल-अचल संपत्तियों, जिनमें चार चाय बागान शामिल हैं, को अपने पास रखने का अधिकार होगा। जिन खंडों की व्याख्या पर हमारे समक्ष प्रश्न उठाए गए हैं, वे निम्नलिखित हैं;

(क) अनुबंधों में उल्लिखित उपखंडों को लागू करने का क्रम;

(ख) समापन सूचना की आवश्यकताएं;

(ग) एमएमएस समूह द्वारा वहन की जाने वाली देनदारियों का परिमाणीकरण;

(घ) किसी भी पक्ष द्वारा और हस्तांतरण दस्तावेज़ की शर्तों का पालन न करने का परिणाम।

कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय ने प्रश्न (क) (ख) या (घ) पर निर्णय नहीं दिया। जहाँ तक (ग) का संबंध है, प्रश्न खंड 4.1.1.11 की व्याख्या तक सीमित था। वह खंड इस प्रकार है:-

"बिक्री सम्पदा में कार्यरत श्रमिकों और अधिकारियों के संबंध में 31 मई, 1998 तक अर्जित" कोई भी वैधानिक बकाया या बकाया।

'बिक्री सम्पदाएँ' वे पाँच सम्पदाएँ हैं जिन्हें उत्तरदाता संख्या 1 द्वारा एमएमएस समूह को हस्तांतरित किया जाना था। जैसा कि हमने देखा है, अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यद्यपि उनके पास उच्च न्यायालय के उस निष्कर्ष की गलती पर एक तर्कपूर्ण मामला था जिसमें कहा गया था कि एमएमएस समूह उपदान देयता का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था, वे इस बिंदु को स्वीकार करने के लिए सहमत थे ताकि पक्षों के बीच मतभेदों को सुलझाया जा सके। इसलिए हमने खंड 4.1.1 की व्याख्या पर उनकी बात नहीं सुनी है। उनकी मूल शिकायत यह थी कि कंपनी विधि समिति 19 अगस्त, 1999 के

आदेश और उसमें शामिल पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ की शर्तों को लागू करने से इनकार नहीं कर सकता था और यही वह मुद्दा है जिसका हमारे द्वारा समाधान किया जाना आवश्यक है।

हमारी राय में, 19 अगस्त, 1999 का आदेश अंतरिम आदेश नहीं था, जैसा कि उत्तरदाताओं ने दावा किया है। इसके द्वारा हल किए गए मुद्दों को पुनः खोला या किसी अन्य तरीके से निपटारे के लिए पुनर्विचार नहीं किया जा सकता। यह आदेश कंपनी अधिनियम की धारा 402 के तहत स्पष्ट रूप से पारित किया गया था, जिसमें लिखा है:-

"402. धारा 397 या 398 के अंतर्गत आवेदन पर (न्यायाधिकरण) की शक्तियाँ - धारा 397 या 398 के अंतर्गत (न्यायाधिकरण) की शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, किसी भी धारा के अंतर्गत कोई भी आदेश निम्नलिखित के लिए प्रावधान कर सकता है:

(क) भविष्य में कंपनी के कार्यों के संचालन का विनियमन;

(ख) कंपनी के किसी सदस्य के शेयरों या हितों का उसके अन्य सदस्यों द्वारा या कंपनी द्वारा क्रय;

(ग) उपर्युक्त रूप से कंपनी द्वारा अपने शेयरों के क्रय की स्थिति में, उसकी शेयर पूँजी में परिणामी कमी;

(घ) ....

(ङ) ....

(च) ....

(छ) कोई अन्य मामला जिसके लिए (न्यायाधिकरण) की राय में यह उचित और न्यायसंगत है कि प्रावधान किया जाना चाहिए।

धारा 402 के अंतर्गत शक्तियाँ अवशिष्ट प्रकृति की हैं और धारा 397 (2) और धारा 398 (2) के अंतर्गत कंपनी विधि समिति को उपलब्ध शक्तियों के अतिरिक्त हैं, जो कंपनी विधि समिति को धारा 397 (1) के अंतर्गत शिकायत किए गए मामलों को समाप्त करने और धारा 398 (1) के अंतर्गत शिकायत किए गए या आशंका वाले मामलों को समाप्त करने या रोकने के उद्देश्य से ऐसा आदेश देने की अनुमति देती हैं जो वह उचित समझे।

निस्संदेह कंपनी विधि समिति 'याचिका और विभिन्न अंतरिम आवेदनों के अंतिम निष्पादन' की बात करता है। ऐसा इसलिए था क्योंकि स्वयं आदेश (जिसमें पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ शामिल थे) के अनुसार, एमएमएस समूहों और प्रतिवादियों के बीच संबंध विच्छेद को पूरा करने के लिए कई कदम उठाए जाने थे। इससे और हस्तांतरण दस्तावेज़ का विलय एक अंतरिम व्यवस्था नहीं बन गया। आदेश के कार्यकारी भाग में और हस्तांतरण दस्तावेज़ के निष्पादन का निर्देश दिया गया था, जिसके बाद पक्षकारों द्वारा अनुसूचियाँ पूरी कर ली गईं। पूरा आदेश सहमति से पारित किया गया था। पक्षकार इससे पीछे नहीं हट सकते। इसलिए इस आदेश को इस अर्थ में अंतरिम आदेश नहीं कहा जा सकता कि इसके द्वारा तय किए गए मुद्दों को फिर से खोला जा सकता है।

धारा 634 क के तहत, जो कंपनी विधि समिति के आदेशों के प्रवर्तन का प्रावधान करती है,

> "कंपनी विधि समिति द्वारा दिया गया कोई भी आदेश उस समिति द्वारा उसी प्रकार लागू किया जा सकता है जैसे कि वह किसी न्यायालय द्वारा उसमें लंबित किसी मुकदमे में दिया गया आदेश हो"।

धारा के आरंभ में प्रयुक्त शब्द 'कोई भी आदेश' यह दर्शाता है कि धारा 397 और 398 के अंतर्गत किसी आवेदन पर कंपनी विधि समिति द्वारा दिए गए सभी आदेश, कंपनी विधि समिति द्वारा पारित आदेश की प्रकृति पर किसी सीमा के बिना, डिक्री की तरह लागू

करने योग्य हैं। (देखें: *लायलपुर बैंक लिमिटेड बनाम अपने पुत्रों एवं एक अन्य के माध्यम से रामजी दास (मृतक)। एआईआर* (32) 1945 प्रिवी काउंसिल 60)।

दीवानी प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत "डिक्री" को इस प्रकार परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है

> "...... किसी निर्णय की अंतिम अभिव्यक्ति जो, जहाँ तक न्यायालय द्वारा व्यक्त किए जाने का संबंध है, वाद में विवादित सभी या किसी भी मामले के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का निर्णायक रूप से निर्धारण करती है और यह प्रारंभिक या अंतिम हो सकती है"।

सभी डिक्री, चाहे प्रारंभिक हों या अंतिम, निष्पादन योग्य होती हैं। (दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 36 देखें।)

19 अगस्त, 1999 का आदेश वास्तव में एक प्रारंभिक आदेश था। मामले का अंतिम निपटारा या अंतिम आदेश, पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के नियम और हस्तांतरण दस्तावेज़ की शर्तों के पूर्ण कार्यान्वयन के बाद ही होगा। इसलिए, संयुक्त प्रबंधन से संबंधित पारित अंतरिम आदेशों को तब तक जारी रखने का निर्देश दिया गया।

गौरतलब है कि कंपनी विधि समिति ने 19 अगस्त, 1999 के अपने आदेश में स्वयं यह दर्ज किया था कि यदि आदेश के कार्यान्वयन में कोई कठिनाई हो, तो "पक्षकार इस आदेश के कार्यान्वयन के लिए हमसे आवेदन करने के लिए स्वतंत्र होंगे"। फिर भी, जब इस तरह के कार्यान्वयन के लिए आवेदन किया गया, तो कंपनी विधि समिति ने अपने ही निर्देशों का पालन नहीं किया।

चूँकि कंपनी विधि समिति, धारा 634 क के अंतर्गत किसी आवेदन पर विचार करते समय, एक निष्पादन न्यायालय के रूप में कार्य करता है, इसलिए वह उन सभी सीमाओं के अधीन होता है जिनके अधीन डिक्री निष्पादित करने वाला न्यायालय होता है। यह सर्वविदित है कि एक निष्पादन न्यायालय डिक्री के विरुद्ध तब तक कोई कदम नहीं उठा सकता, जब

तक कि निष्पादित की जाने वाली डिक्री, अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र के अभाव में अमान्य न हो। एक डिक्री अधिकार क्षेत्र से बाहर होती है यदि डिक्री पारित करने वाला न्यायालय किसी ऐसे अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करता है जो उसके पास नहीं था और जिसे पक्षकारों द्वारा छोड़ा नहीं जा सकता था। (देखें: *सुंदर दास बनाम राम प्रकाश,* [1977] 2 एससीसी 662,667; *सेठ हिरालाल पाटनी बनाम श्री कालीनाथ,* [1962] 2 एससीआर 747, 750; *वासुदेव धनजीभाई मोदी बनाम राजाभाई अब्दुल रहमान एवं अन्य,* [1970] 1 एससीसी 670, 672; *विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से रफीक बीबी (मृत) बनाम विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से सैयद वालिउद्दीन (मृत) एवं अन्य,* [2004] 1 एससीसी 287,292)। पिछले दो निर्णयों में यह भी माना गया है कि अधिकार क्षेत्र का अभाव डिक्री के मूल में ही होना चाहिए ताकि निष्पादन न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँच सके कि डिक्री अमान्य है।

इसके अलावा, 19 अगस्त, 1999 का आदेश एक सहमति आदेश था। इसके नियम और शर्तें पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ में निहित थीं, जो स्पष्ट रूप से आदेश का एक अभिन्न अंग थे। सहमति डिक्री को न्यायालय की अनुमति के साथ एक अनुबंध माना गया है। यह एक मात्र अनुबंध से कहीं अधिक है और इसमें आदेश और अनुबंध दोनों के तत्व शामिल हैं। (देखें: *वेंटवर्थ बनाम बुलेन,* 141 ईएलआर 769; *सी.एफ. अंगदी बनाम वाई.एस. हिरणय्या,* [1972] 1 एससीसी 191, 197)। जैसा कि प्रिवी काउंसिल ने 1929 में ही कहा था, "इस संबंध में सहमति से पारित आदेश और बिना पारित आदेश के बीच एकमात्र अंतर यह है कि पहला तब तक लागू रहता है जब तक कि उसे आपसी सहमति से खारिज न कर दिया जाए या न्यायालय के किसी अन्य आदेश द्वारा अपास्त न कर दिया जाए; दूसरा तब तक लागू रहता है जब तक कि उसे अपील पर खारिज न कर दिया जाए (देखें: *चार्ल्स ह्यूबर्ट किंच बनाम एडवर्ड कीथ वालकॉट और अन्य, एआईआर* (1929) प्रिवी काउंसिल 289)।

यह किसी का भी मामला नहीं है कि 19 अगस्त, 1999 का आदेश अमान्य था। उत्तरदाताओं ने 19 अगस्त, 1999 के आदेश को वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया था। कंपनी विधि समिति ने उस आवेदन को खारिज कर दिया। पटना उच्च न्यायालय में एक अपील दायर की गई है, जो लंबित बताई जा रही है। हालाँकि, उत्तरदाता ने हमारे ध्यान में यह नहीं लाया है कि वापसी के लिए आवेदन इस तर्क पर आधारित था कि 19 अगस्त, 1999 का आदेश अमान्य था। ऐसा कोई मुद्दा न उठाए जाने और उस पर निर्णय न लिए जाने की स्थिति में, कंपनी विधि समिति आदेश को निष्पादित करने के लिए बाध्य था। यदि समिति को लगता है कि डिक्री या उसकी किसी शर्त की व्याख्या की आवश्यकता है, तो उस विशेष शर्त की व्याख्या करना और उस व्याख्या के आधार पर डिक्री को निष्पादित करना समिति के अधिकार क्षेत्र में है। जैसा कि इस न्यायालय ने *तोपनमल छोटामल बनाम मेसर्स कुंदोमल गंगाराम एवं अन्य,* एआईआर (1960) एससी 388, 390 में कहा था, यदि कोई डिक्री अस्पष्ट है, तो निष्पादन न्यायालय का कर्तव्य है कि वह डिक्री की व्याख्या करे। (*सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम राजगोपालन, एआईआर* (1964) एससी 743,748 भी देखें)।

कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय, दोनों ने वास्तव में खंड 4.1.1.11 की व्याख्या की और इस खंड के अर्थ के बारे में निश्चित, यद्यपि भिन्न, निष्कर्ष पर पहुँचे। हो सकता है कि निष्कर्ष वह न हो जिसके लिए अपीलकर्ता तर्क दे रहे थे। यह भी हो सकता है कि समिति या उच्च न्यायालय द्वारा धारा की व्याख्या पक्षकारों के विचार में न हो। फिर भी, एक बार समझौते की विशेष शर्तों पर सहमत हो जाने के बाद, जो किसी डिक्री में शामिल थीं, संबंधित पक्ष निष्पादन न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई शर्तों का पालन करने के लिए बाध्य हैं। एक बार व्याख्या हो जाने के बाद, डिक्री को व्याख्या के अनुसार निष्पादित किया जाना चाहिए।

निष्पादन न्यायालय का प्रयास यह सुनिश्चित करना होना चाहिए कि पक्षकारों को डिक्री का फल मिले। यह आदेश तब और भी प्रबल हो जाता है जब यह सहमति डिक्री हो

और जब सहमति डिक्री पारिवारिक समझौता हो तो यह दोगुना प्रबल हो जाता है। पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के खंड 3.1 और 3.6 यह स्पष्ट करते हैं कि ये समझौते पक्षों के बीच परिवार के सदस्यों के बीच संयुक्त रूप से स्वामित्व वाली संपत्तियों से संबंधित लंबे समय से लंबित विवादों को अंततः हल करने के लिए किए गए थे। ये खंड इस प्रकार हैं:-

"शर्मा परिवार और उनके स्वामित्व वाली कंपनियों के विवादों को सुलझाने और दोनों समूहों के बीच सद्भाव, शांति, प्रेम और स्नेह को पुनः स्थापित करने और शर्मा परिवार और उनके स्वामित्व वाली कंपनियों के कल्याण और समृद्धि के लिए;

पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन में राम बहादुर ठाकुर लिमिटेड (आरबीटीएल) की परिसंपत्तियों से संबंधित हस्तांतरण दस्तावेज़ भी शामिल होगा, जो कंपनी विधि समिति के निर्देशों के अनुसार निष्पादित किया गया है, जो इसके साथ संलग्न है और अनुसूची के रूप में चिह्नित है।

5. राम बम बहादुर ठाकुर लिमिटेड की परिसंपत्तियों से संबंधित उपर्युक्त हस्तांतरण दस्तावेज़, इस पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन के कार्यान्वयन में है और इसका एक अभिन्न अंग है।

कई फैसलों में बार-बार इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि पारिवारिक समझौते एक विशेष न्यायसम्य द्वारा शासित होते हैं और अगर ईमानदारी से किए जाएँ तो उन्हें लागू किया जाना चाहिए। ऐसा तब भी होगा जब "शर्तों पर सहमति पक्षकारों की किसी गलती के आधार पर हुई हो या वे किसी भूल या तथ्य की अज्ञानता के कारण उत्पन्न हुई हों कि पक्षकारों के अधिकार वास्तव में क्या हैं, या वे कौन से बिंदु हैं जिन पर उनके अधिकार वास्तव में निर्भर करते हैं"। ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी व्यवस्था का उद्देश्य परिवार को लंबे समय तक चलने वाले मुकदमे से बचाना और परिवार में सद्भाव और सद्भावना लाना होता है (देखें *केल बनाम उप निदेशक, समेकन,* [1976] 1 एससीआर 202,122,123,125)। न्यायालय पारिवारिक व्यवस्थाओं के पक्ष में भारी पड़ती हैं और "ऐसे मामले जो अजनबियों

के बीच समान लेन-देन की वैधता के लिए घातक होंगे, पारिवारिक व्यवस्थाओं के बाध्यकारी प्रभाव पर आपत्ति नहीं हैं"। हाल ही में *अमतेश्वर आनंद बनाम वीरेंद्र मोहन सिंह एवं अन्य,* [2006] 1 एससीसी 148) में इस दृष्टिकोण को दोहराया गया है।

हमारी राय में, कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय दोनों ने कंपनी अधिनियम की धारा 634 क के तहत 19 अगस्त, 1999 के आदेश को निष्पादित करने से इनकार करके गलती की है। इस प्रकार वे उस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहे हैं जिसके साथ वे निहित थे। जिस आदेश को निष्पादित करने के लिए वे बाध्य थे, उसकी प्रकृति को देखते हुए यह विफलता और भी गंभीर हो जाती है। उन्होंने गलती से केवल अनुबंधों पर लागू सिद्धांतों पर ही आगे बढ़ना जारी रखा है और इस तथ्य की अनदेखी की है कि पक्षों के बीच समझौता कंपनी विधि समिति के सहमति आदेश में परिणत हुआ था। उतरदातओं का यह तर्क कि इस न्यायालय को अनुच्छेद 136 के तहत मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, अपीलकर्ताओं की ओर से 5 चाय बागानों के प्रबंधन में किसी भी कथित कदाचार के कारण अस्वीकार्य है। अपीलकर्ता की 5 चाय बागानों के संचालन में कथित रूप से दक्षता की कमी, यह तय करने के लिए कोई महत्वपूर्ण विचार नहीं है कि 19 अगस्त, 1999 के आदेश को लागू किया जाना चाहिए या नहीं।

उत्तरदाता का यह तर्क कि अपीलकर्ता स्वयं सहमति आदेश की शर्तों का पालन करने के लिए तैयार नहीं थे, हमें गलत प्रतीत होता है। धारा 634 क के तहत आवेदन, यदि आवश्यक हो तो 19 अगस्त, 1999 के आदेश के कार्यान्वयन के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति करके किया गया था। इसे पूरा करने के लिए। वास्तव में, जब धारा 634 क के तहत आवेदन कंपनी विधि समिति में लंबित था, तब भी उपाध्यक्ष ने अपीलकर्ताओं को सुझाव दिया था कि वे हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 4.1.1.11 के तहत उपार्जित उपदान और हस्तांतरण दस्तावेज़ के तहत दावा किए गए ब्याज के एक निश्चित हिस्से के संबंध में अपने दावे को छोड़ दें। अपीलकर्ताओं ने पुष्टि की कि वे उपाध्यक्ष के सुझाव को स्वीकार करेंगे,

लेकिन ऐसा इस आधार पर करेंगे कि उसी दिन इसके संबंध में एक सहमति आदेश पारित किया गया था। यह बात अपीलकर्ता के अधिवक्ताओं ने 19 दिसंबर, 2000 को कंपनी विधि समिति और उसके सदस्यों तथा उत्तरदाताओं के अधिवक्ता को संबोधित अपने पत्र में दर्ज की थी और हमारे समक्ष इस पर कोई विवाद नहीं किया गया है क्योंकि यह सही स्थिति को नहीं दर्शाता है। यह किसी ऐसे पक्ष का आचरण नहीं है जो डिक्री की शर्तों का पालन करने को तैयार नहीं है।

इस प्रश्न पर कि क्या अपीलकर्ताओं ने हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 4 के अनुसार, पूरा होने के साथ-साथ क्रय मूल्य का भुगतान करने में चूक की थी, यह फिर से पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ की शर्तों की व्याख्या से संबंधित है। उत्तरदाताओं के अनुसार, उनकी ओर से कोई चूक नहीं हुई क्योंकि उत्तरदाताओं को न केवल पूरा होने की सूचना देने से पहले पाँच सम्पदाओं से संबंधित सभी बकाया दावों का निष्पादन करना था, बल्कि यह प्रमाणित करने वाले आवश्यक दस्तावेज़ भी संलग्न करने थे कि उत्तरदाता संख्या 1 द्वारा बिक्री सम्पदाओं को सभी भारों से मुक्त एमएमएस समूह को हस्तांतरित किया जा सकता है। कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय ने इस आधार पर कार्यवाही की है कि पक्षों के बीच एकमात्र विवाद खंड 4.1.1 11 की व्याख्या को लेकर था। हालाँकि, दोनों पक्षों द्वारा हमारे द्वारा पहले उल्लेखित चार तर्कों के गुण-दोषों पर विस्तृत तर्क दिए गए हैं। शुरू में हमारा विचार था कि इस विवाद का अंतिम समाधान हमें ही करना चाहिए। हालाँकि, पुनर्विचार करने पर, हम यह उचित समझते हैं कि इन मुद्दों को कंपनी विधि समिति के पास निर्णय के लिए वापस भेजा जाए, यदि वह इस बात से संतुष्ट है कि ये मुद्दे पक्षकारों द्वारा उसके समक्ष निष्पक्ष रूप से उठाए गए हैं। हम यह स्पष्ट करते हैं कि कंपनी विधि समिति द्वारा और स्थानांतरण दस्तावेज़ के खंडों की जो भी व्याख्या की जाए, समिति को उन खंडों को व्याख्या के अनुसार ही लागू करना होगा।

इसके अलावा, खंड 4, जो एमएमएस समूह द्वारा क्रय मूल्य के भुगतान से संबंधित है, में उत्तरदाता संख्या 1 को उनके द्वारा देय कुल राशि का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है, अर्थात 7,24,67,708.90 रुपये, जिसमें से कुछ कटौतियाँ घटा दी गई हैं। जहाँ तक कटौतियों का संबंध है, कुछ खंडों में कटौतियों की मात्रा निर्धारित की गई है, जबकि अन्य खंडों में उन्हें अनिर्धारित छोड़ दिया गया है, अर्थात किसी मात्रा का उल्लेख नहीं किया गया है। पहली श्रेणी में खंड 4.1.1.1 से खंड 4.1.1.5 शामिल हैं। खंड 4.1.1.6 से 4.1.1.11 के अंतर्गत राशियों का निर्धारण किया जाना आवश्यक था। यह कार्य समिति द्वारा किया जाना होगा। खंड 4.1.1.1 से 4.1.1.S और 4.1.1. में उल्लिखित आंकड़े भी खंड 4.1.1.12 के तहत कंपनी विधि समिति द्वारा नियुक्त स्वतंत्र लेखा परीक्षक द्वारा सत्यापन के अधीन थे। कंपनी विधि समिति ने 19 अगस्त, 1999 के आदेश द्वारा श्री एम.सी. जोसेफ, चार्टर्ड अकाउंटेंट को नियुक्त किया था। हमें यह नहीं बताया गया है कि स्वतंत्र लेखा परीक्षक ने सत्यापन किया है या नहीं।

हम स्वयं पक्षों द्वारा उठाए गए मुद्दों पर विचार करने का प्रस्ताव नहीं रखते हैं, अर्थात क्या समापन सूचना वैध थी और न ही हस्तांतरण दस्तावेज़ के खंड 4 के तहत कटौतियों का परिमाणीकरण। ये ऐसे मुद्दे हैं जिन पर कंपनी विधि समिति को पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़ के अनुसार सहमति आदेश को क्रियान्वित करते समय विचार करना होगा। हमारे लिए समझौते को निरस्त करने के पक्षों के अधिकारों पर विचार करना अनावश्यक है (यह मानते हुए कि इस स्तर पर ऐसा रद्द करना संभव था) क्योंकि दोनों समूहों में से किसी ने भी आज तक निरस्तीकरण का कोई अधिसूचना जारी करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया है।

हम ध्यान दें कि पारिवारिक व्यवस्था ज्ञापन और हस्तांतरण दस्तावेज़, कंपनी विधि समिति की ओर से पक्षों के बीच विवादों को इस तरह से समाप्त करने के सराहनीय और दृढ़ प्रयासों का परिणाम थे, जो उत्तरदाता संख्या 1 के हित में होता, क्योंकि शेयरधारकों के दो

समूहों के बीच गतिरोध था और पक्षों को बहुत सारे अनावश्यक उत्पीड़न, व्यय और कटुता से बचाया गया। हमने दोनों पक्षों को स्वीकार्य उपाय प्रस्तावित करके विवाद को समाप्त करने का भी प्रयास किया। हालाँकि, ऐसा समाधान संभव प्रतीत नहीं होता। इसलिए, कंपनी विधि समिति को 19 अगस्त, 1999 के अपने आदेश को कानून के स्थापित सिद्धांतों और इस निर्णय में हमारे द्वारा व्यक्त की गई राय के अनुसार निष्पादित करने का कार्य सौंपना होगा। कंपनी विधि समिति और उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णयों को पूर्व में बताए गए कारणों से अपास्त किया जाता है। अपीलें स्वीकार की जाती हैं और मामला कंपनी विधि समिति को वापस भेज दिया जाता है ताकि 19 अगस्त, 1999 के आदेश का क्रियान्वयन पूरा किया जा सके।

लागत के रूप में कोई आदेश नहीं है।

अपीलों की अनुमति है।

वी.एस.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।